SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

हिंदी साहित्य के यायावरी साहित्यकार नागार्जुनः श्री लंका की छाप और उनके साहित्य का एक झलक

नागॉड वितान ब्रसिल, पीएच–डी., भाषा अध्ययन विभाग
श्रीलंका सबरगमुव विश्वविद्यालय, श्री लंका

ORIGINAL ARTICLE

Author
नागॉड वितान ब्रसिल, पीएच–डी.
E-mail :bresil@ssl.sabac.lk

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 20/03/2025
Revised on : 21/05/2025
Accepted on : 30/05/2025
Overall Similarity : 02% on 22/05/2025

शोध सार

नागार्जुन हिंदी साहित्य जगत के मूर्धन्य साहित्यकारों में से एक है। बिहार राज्य के दरबंगा जिले के सतलखा गाँव में जन्मे नागार्जुन, संस्कृत में 'चाणक्य', मैथिली क्षेत्र में 'यात्री' और हिंदी साहित्य में 'नागार्जुन'नाम से जना जाता था। सन् 1936 में श्री लंका में प्रवास की अवधि में उनका नाम नागार्जुन में बादल दिया गया था। नागार्जुन कविता, कहानी, उपन्यास, निबंध के लोकप्रिय लेखक थे। प्रस्तुत शोध आलेख में उनके श्री लंका के प्रवास के समय की छाप और उनकी साहित्य सेवा पर विवरण उपलब्ध है। इसके लिए द्वितीयक आँकड़े संकलित किये गये हैं।

मुख्य शब्द

श्री लंका, समाजवादी विचार धारा, कविता, उपन्यास, कहानी, नागार्जुन.

प्रस्तावना

हिंदी साहित्य जगत में जो सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार अपनी छाप छोड़कर गये थे उन साहित्यकारों के नामों में बाबा नागार्जुन का नाम शिखर पर विराजित होना कोई रोक नहीं सकता। उनकी साहित्यिक सेवा साहित्य संसार में इतना मजबूत है कि उन्हें संस्कृत साहित्य में 'चाणक्य', मैथिली साहित्य में 'यात्री', हिंदी साहित्य में 'नागार्जुन' और लेखकों और मित्रों में 'नागाबाब' नामों से जाना जाता था। बिहार राज्य के दरबंगा जिले के सतलखा गाँव में श्री गोकुल मिश्र और श्रीमती उमा देवी के परिवार में 30 जून 1911 में बाबा का जन्म हुआ था। बचपन में उन्हें 'ठक्कन' कहा करते थे और इसके अतिरिक्त उन्हें कई नाम थे जिनमें से वैद्यनाथ मिश्र, ठक्कन, वैद्यनाथ मिसिर, अकिंचन और वैदेह प्रमुख हैं लेकिन घुमक्कड़ स्वभाव के होने के नाते 'यात्री' भी कहा करते थे। इनके 'वैद्यनाथ' और 'ठक्कन' नामों के साथ

जुड़ी किंवदंतियाँ भी प्रचलित हैं। कहा जाता है कि गोकुल मिश्र और उमादेवी को पाँच संतानें हुईं जिनमें से केवल एक बची थी। माँ–बाप को डर था कि बची संतान भी चली जाएगी इसलिए गोकुल मिश्र जी चार संतानों के चल बसने के बाद उन्होंने वैद्यनाथ धाम में पुत्र की लंबी आयु की कामना करते हुए एक महीने भर का अनुष्ठान रखा था। भगवान की कृपा से जन्मे बच्चे का नाम वैद्यनाथ रखा गया था। ठक्कन इसलिए कहा जाता है कि परिवार के बड़े लोगों को शंका थी कि यह भी चार दिनों के लिए आया और माँ–बाप को ठगकर चार दिनों से चला जाएगा।[1]

आर्थिक संकटों से पीड़ित परिवार में जन्मे बाबा अपने बचपन में काफी कष्टमय, पीड़ित और कर्कश जीवन बिताता था। बचपन में माँ के प्यार का आंचल उड़ने के बाद पिता के कट्टर व्यवहारों से बहुत पीड़ित था। पिता के कई व्यक्तिगत व्यवहार से भी वे निराश थे और उनका मन भी दिन पर दिन दृढ़ और विद्रोही स्वभाव में परिवर्तन होता चला जाता था। बाबा ने कृष्णा सोबती को दिया एक साक्षातकार में अपने विरक्ति का कारण इस प्रकार व्यक्त किया था कि पिता अपनी विधवा भाभी पर आसक्त था जो उन्हें स्वयं बरदास्त के बाहर था और घृणा की बात थी। ....पापा और विधवा भाभी की घटना मेरी विरक्ति का मूल कारण था। मौका लगते ही घर से भाग निकला... ।[2]

बाबा के विद्रोही और क्रांतिकारी विचार युवावस्था में पहुँचते–पहुँचते विभिन्न गतिविधियों से प्रभावित होकर समाज के सम्मुख प्रदर्शित होने लगे। उनकी ये भावनाएँ उपन्यासों, कहानियों, कविताओं, निबंधों तथा समाज सेवा कार्यों में द्रष्टव्य हैं। बाबा काशी में छात्रवास में रहते समय एक घटना घटी थी जो उनके विद्रोही स्वभाव का समर्थन करती है। धर्मशाला में किसी तीर्थ यात्री बुढ़िया महिला का अर्धनग्न शव सड़ रहा था। बाबा ने अपने सहपाठी मित्रों की सहायता के साथ शव चारपाई में रखकर मणिकर्णिका घाट में अंतिम संस्कार करवाया था।[3] नागार्जुन के गुस्से के विषय में भी कई रोचक घटनाएँ हैं। एक बार उन्हें तरानन्द वियोगी के साथ पुस्तकों की खरीदारी के लिए दिल्ली में राजकमल प्रकाशन गये और वहाँ से सुलतानगंज तक टैम्पू से जाना था। वे भागीरथी गली पहुँचकर देखा तो पाया कि गाड़ी में पुस्तकों के दो पैकेट नहीं दिखे थे। बाबा ने कहा था कि एक पैकेट छूट गया है और तरान्दन ने कहा नहीं मैंने दोनों पैकेट एक साथ बांध दिया था। तभी उन्हें गुस्सा आया और तरान्दन को बहुत डाँटा था। ...आप गधे हैं। बेवकूफ हैं। कोई समझ नहीं। छूट गया एक पैकेट वहीं। ऐसा लापरवाह आदमी मैंने कहीं नहीं देखा है। गिरदाभकोल हैं आप....। बाबा ने अपने गुस्से का विवरण किसी साक्षातकार में अपने शब्दों में इस प्रकार दिया था कि सुनते ही पाठक चकित हो उठते हैं, '...कै और घटना सुनता हूँ। 15 दिसंबर की बात है। बक्सर सेंट्रल जेल में था। कोई सुविधा न थी। हम एक कमरे में 125 थे, रात को सोये थे, दो कतारों में। बीच में थोड़ी सी जगह खाली थी। जेल के चूल्हा सुलग रहा था। एक आदमी गरम पानी लेकर बीच में डालने लगा। मैंने उसका हाथ पकड़ा। गुस्सा इतना आया कि मन हुआ उसी के ही सर पर डाल दूँ और लोगों ने कहा मर जाएगा।[4]

श्रीमती अपराजिता देवी के साथ वैवाहिक जीवन में प्रविष्ट बाबा ने चार पुत्रों और दो पुत्रियों से पितृत्व का खिताब प्राप्त किया, लेकिन वैवाहिक जीवन के प्रति उनकी रुचि छूट गयी और विवाह के कुछ वर्षों बाद घर–गृहस्थी छोड़कर यायावरी जीवन बिताने लगे जिससे अपराजिता देवी को अपने बाल–बच्चों के पालन–पोषण में अनगिनत कठिनाइयों को झेलना और सामना करना पड़ा।

बाबा के बचपन के मित्र जयानंद झा नेअतीत की यादें ताजा करते हुए आजकल पत्रिका को साक्षात्कार दिया था जिसमें बाबा के मन की चंचलता का विवरण इस प्रकार व्यक्त किया था कि ....मैं यात्री से उम्र से थोड़ा छोटा हूँ। बचपन में हम दोनों कुश्ती लड़ते थे और कबड्डी खेलते थे। मैं कांग्रेस में था और वे बाद में कॉमियुनिस्ट हो गये। वे पूरा देश घूमकर आते और कहते 'हिन्दुस्थान में कॉमीयुनिस्ट होना चाहिए'। मैं उनका मजाक उड़ता था। दोनों में मित्रों वाला विवाद खूब होता और विनोदपूर्ण होता था। उसमें कटुता नहीं थी। मैं कहता तुम बिना सिद्धांत वाले आदमी हो। दिल्ली कहकर जाते हो पहुँचते हो नेपाल। बंबई बताते हो तो पहुँच जाते हो कलकत्ता। कभी सत्याग्रह, कभी बौद्ध, कभी कम्युनिस्ट हो कभी सम्पूर्ण क्रांति, एक जगह टिकते नहीं।[5]

घुमक्कड़ स्वभाव के बारे में अपने पुत्र शोभाकांत का कहना है कि सन् 1925 में संस्कृत की प्रथमा पास करने के बाद आगे अध्ययन के लिए घर से निकले तो निकल ही गये। इसके बाद अपनी ठेठ बुढ़ौती तक उन्होंने किसी

गाँव, प्रांत या देश के किसी कोने में अपना स्थायी ठोर ठिकाना नहीं बनाया।[6] बाबा पंजाब, राजस्थान, हिमाचल, गुजरात एवं कठियावाड़ में भ्रमण कर रहे थे और उन्हें भारत के बाहर तिब्बत में घूमने का भी अवसर मिल था।उनके यायावरी जीवन के विषय में बाबुराम गुप्त ने 'उपन्यासकार नागार्जुन' में उल्लेख किया था कि वे पंजाब, गुजरात, राजस्थान, हिमाचल और कठियावाड़ आदि देशी यात्रा और सन् 1936 को श्रीलंका और सन् 1938 को राहुल जी के कहने पर बिहार सरकार ने अनुसंधान कार्यों के लिए प्रतिनिधि के रूप में तिब्बत भेजा गया था। मगर तिब्बत पहुँचने का मनोरथ सफल न हो सके और वे राह में घोड़े से गिर पड़ने से जख्मी होने के कारण कालिपोंग में ठहरना पड़ा।

सर्वप्रथम उन्होंने समुद्र पार का सौभाग्य सन् 1936 में श्रीलंका की यात्रा के साथ प्राप्त की थी जो उनके जीवन का संक्रांति काल या एक मोड़ था। कट्टर हिंदू परिवेश से श्रीलंका पहुँचे बाबा अपना नाम वैद्यनाथ मिश्र, नागा बाबा सब त्याग करके श्रीलंका के कॅलणिय विद्यालंकार महाविहार परिवेण में बौद्ध धर्म की दीक्षा ली थी और वहीं राहुल सांकृत्यायन, भदन्त अनंद कौशल्यायन, आचार्य जगदीश कश्यप और भदन्त शांति भिक्षु की मित्र मंडली में शामिल होने का सौभाग्य मिल था। प्रर्वृजा ग्रहण करते ही उनके सभी पारिवारिक नामों के बदले महाविहार के अध्यक्ष भंते के आशीर्वाद से 'नागाजी या नागार्जुन' नाम दिया गया और परिवर्ती काल में देशी–विदेश सभी हिंदी साहित्य प्रेमी उन्हें 'नागार्जुन' नाम से पहचाने लगे थे। भंते नागार्जुन श्रीलंका के बौद्ध भिक्षुओं के साथ परिवेण की अवधि में श्रीलंकाई भिक्षुओं को संस्कृत पढ़ा रहे थे। वे पाली और श्रीलंका की भाषा सिंहली का अध्ययन कर रहे थे। सिंहली अध्ययन की चतुरायी का समर्थन करते हुए उन्होंने 'धर्मलोक शतकम्' ग्रंथ का सिंहली में लिप्यंतरण किया था। श्रीलंका में पढ़ाई करते समय उन्हें साहित्य के प्रति अधिक रुचि और प्रेम जागे थे। अतः पाठकों को उनके अधिकांश रचनाओं का आश्रय उनके पुनः भारत पहुँचने के बाद मिलता है और नागार्जुन ने भी अधिकांश रचनाओं का सृजन इस अवधि में ही किया था।

श्रीलंका में रहते समय भंते नागार्जुन का मन राजनीति के प्रति उन्मुक्त होना एक अविस्मरणीय और अनोखी घटना है। सन् 1935[7] में श्रीलंका की प्राचीनतम राजनैतिक पार्टी सम–समाज पार्टी की स्थापना की गायी थी और श्रीलंकाई समाज में भी समाजवादी विचारधारा की व्याप्ति शीघ्र हो रही थी। इस समय भंते नागार्जुन परिवेण के वामपंथी विचारों के गुरु भिक्षुओं के संपर्क से समाजवादी विचरधारा से प्रभावित हुए। नागार्जुन तत्काल श्रीलंकाई समाजवादी नेताओं के संपर्क में रहे और उनके साथ वामपंथी विचारों का आदान–प्रदान भी करते थे। श्रीलंकाई वामपंथी नेताओं से उनके मिलने का विवरण इस प्रकार उल्लेख मिलता है कि 'लंका में सम–समाज के विप्लवी नेताओं से मिलना–जुलाना शुरू हो गये थे।'[8] सन् 1968 में 'सनीचर 2' के लिए नागार्जुन द्वारा दिए गए साक्षातकार में अपने वैचारिक विकास के बारे में इस प्रकार बताया था कि काशी में रहते हुए प्रगतिशीलता शब्द को जाना था, फिर भी वर्ग–चेतना जैसे शब्दों से उन दिनों हमारा परिचय नहीं के बरबर है। वस्तुतः वह राष्ट्रीय चेतना का दौर था। वर्ग–चेतना का माहौल तब उतना मुखर नहीं था। यह माहौल मुझे सन् 1935–1936 के करीब नजर आया। सन् 1937 में लंका के विद्यालंकार के महाविहार में रहते व्यक्त वहाँ के सम–समाजवादी अध्यापक साधुओं से मेरे प्रथम परिचय हुआ और तभी मार्क्स, लेनिन, स्टार्लीन की कुछेक कृतियों को पढ़ने का अवसर मिल। सन् 1938 श्रीलंका से वापस आने पर अपने राजनैतिक गुरु विख्यात किसान नेता स्वामी सहजनन्द के साथ 'समर स्कूल ऑफ पॉलिटिक्स' में सम्मलित हुआ।[9]

बाबा के पुनः श्रीलंका की यात्रा के उपरांत गाँव पहुँचते समय भी कई अद्भुत घटनाएँ हुई थी। गाँव पहुँचते ही गाँववालों और मगध ब्राह्मणों से खूब विरोध हुआ और गाँव का प्रवेश भी मना करते थे। उन लोगों का कहना था कि वह लंका आदि गये थे, समुद्र पार जो कि अपराध था। उन्हें गंगाजल से स्नान कराकर संस्कार किया गया था। दुबारा जनेऊ पहनकर हिंदू बनाया गया।[10] उन्हें गाँव में रहने के लिए बाध्य किया गया। पड़ोस के शहर मधुबनी, दरबंगा तक पहुँचने का इजाजत नहीं मिली। घरवाले सोचते थे कि कहीं फिर भाग न जाएँ। समाज में सब लोग उन्हें पत्नी त्यागा, बौद्ध धर्म के दीक्षित होने के बाद पुनः गृहस्थाश्रम में लौटने पर लांछन लगाने लगे। उनकी कटु आलोचना करने लगे। दूसरी ओर खुफिया पुलिस की निगाह उनपर हमेशा लगी रहती।[11] इतना नहीं गाँववालों के विरोध का अंत होने का नाम नहीं ले रहा था। पुनः उन लोगों ने कहा कि एक तो सन्यास से वापस आया और दूसरा

समुद्र पार गया, तीसरी बात थी बौद्ध धर्म से दीक्षित होना। उनमें ऐसा विरोध था कि यह लड़का ब्राह्मणों के समाज में वापस नहीं लिय जा सकता।

लेकिन बाबा के साहित्य निर्माणों में द्रष्टव्य वामपंथी विचारधारा का प्रेरणा स्रोत श्रीलंका से प्राप्त अनुभवों का भरमार प्रभाव है। उनके अच्छे–अच्छे निर्माणों का सृजन और राजनीति में सक्रिय प्रवेश श्रीलंका से पुनः भारत पहुँचने के बाद प्रदर्शित होता है। श्रीलंका में वामपंथी विचारधारा और सम–समाजवादी नेताओं से प्राप्त अनुभवों से बाबा खूब प्रभावित और गरम हो गए थे। उनके प्रत्येक साहित्य निर्माणों में यह द्रष्टव्य है।

साहित्य संसार में उनका स्थान सर्वोपरी है क्योंकि उन्होंने साहित्य की प्रत्येक विधा में अपनी लेखनी की चतुराई दिखायी है। लेखन में इनकी प्रतिभा का समर्थन उनके द्वारा निर्मित ह्रदय छूने वाली रचनाएँ गवाह हैं। बाबा ने सर्वप्रथम आठ पृष्ठों की कविताएँ लिखीं जिन्हें रेल में बेचकर अपने परिवार के लिए आर्थिक रूप से सहायता की। उनकी लेखन कला यही से विकसित हुई थी। बाबा का काव्य जगत में औपचारिक पदार्पण सन् 1929 में अपनी मातृभाषा मैथिली में रचित 'मिथिला' कविता के साथ हुआ है, तब से अधिकांश पाठकों में बाबा की पहचान कवि के रूप में हुई थी जो अत्युक्ति की बात नहीं क्योंकि उनके द्वारा रचित अद्वितीय कविताएँ समाज के प्रत्येक कोने की खुशबू से महकती हैं। उनके कविता संग्रहों में अन्तर्गत 'प्रेत का बयान','गुलाबी चूड़ियाँ' और 'बादल घिरते देखा' समाज के एक दूसरे से अलग तीन पहलुओं का ह्रदयस्पर्शी विवरण है। इन तीनों रचनाओं को जाँचने से बोध होता है कि बाबा की कविताओं का वर्णयविषय भी तीन प्रकार के हुए थे।

'ओ रे प्रेत
कड़ककर बोले नरक के मालिक यमराज
सच सच बतला
कैसे मार तू ....[12]
(प्रेत का बयान)

....अमल धवलगिरी के शिखरों पर
बादल को घिरते देखा हैं
छोटे–छोटे मोती जैसे
उसके शीतल तुहिन कणों का
मानसरोवर के उन स्वर्णिम
कमलों पर घिरते देखा
बदल को घिरते देखा....[13]
(बदल को घिरते देखा)

प्राइवेट बस का ड्राइवर है तो क्या हुआ
सात साल की बच्ची का पिता तो है!
सामने गियर से ऊपर
हुक से लटका रक्खी हैं
काँच की चार चूड़ियाँ गुलाबी
बस की रफ्तार के मुताबिक
हिलती रहती है ....[14]
(गुलाबी चूड़ियाँ)

1. पहले वर्ग में वे कविताएँ आती हैं जिनमें रागात्मक संवेदना को उजागर करती हुई सौंदर्यानुभूति की अभिव्यक्ति करती है।

2. दूसरे वर्ग में वे कविताएँ आती हैं जिनमें सामाजिक विषमता और विसंगतियों के यथार्थ और साफ–सुतरे चित्र प्रस्तुत करते हैं।
3. तीसरे वर्ग में वे कविताएँ आती हैं जिनमें उद्‌बोधनात्मक और प्रचारात्मक विचार हैं तथा अपेक्षाकृत हल्की हैं।[15]

इस प्रकार सैकड़ों कविताओं से ओतप्रोत उनके 'बूढ़ावर (1941–मैथिली)', 'विलाप (1941–मैथिली)', 'शपत (1948–मैथिली)', 'चित्रा (1948–मैथिली)', 'चना जो गरम (1942)', 'युगधारा(1953)', 'सतरंगे पंखोवाली(1957)', 'प्रेत का बयान (1957)', 'पत्रहीन नग्न गांछ (1957–मैथिली)', 'तालाब की मछलियाँ (1971)', 'तुमने कहा था (1980)', 'प्यासी पथराई आँखें (1980)' 'खिचड़ी विप्लव देखा हमने (1980)','हजार–हजार बाहोंवाली (1981)', 'पुरानी जूतियों का कोरस (1983)', 'रत्नगर्भ(1984)', 'ऐसे भी हम क्या–ऐसे भी तुम क्या (1985)', 'आखिर ऐसा क्या कह दिया मैंने (1986)', 'इस गुब्बारे की छाया में', 'भूल जाओ पुराने सपने' और 'अपने खेत में' काव्य संग्रहों ने हिंदी काव्य जगत की पूर्णता के लिए योगदान प्रदान किया था।

उपन्यास संज्ञा सुनते ही सभी पाठकों को उपन्यास सम्राट प्रेमचंद का नाम स्मरण होना निरायास से होता है फिर भी हिंदी उपन्यास संसार में प्रेमचंद के पथ पर अग्रसर अल्प उपन्यासकारों के नामों में 'नागा बाबा' का नाम कितने पाठकों को स्मरण हो आता है? 'रतिनाथ की चाची (1948)', 'बलचनमा (1952)', 'बाबा नटेसरनाथ (1954)', 'दुखमोचन (1957)', 'वरुण के बेटे (1957)', 'नई पौध (1957)', 'कुंभीपाक (1960)', 'हीरक जयंती (1961)', 'उग्रतारा (1963)', 'इमरतिया (1969)', 'पारो (1975)', 'नवतूरिया' (मैथिली उपन्यास) और 'जामनिया का बाबा' इत्यादि उनके दस से अधिक प्रकाशित उपन्यासों ने बाबा को हिंदी उपन्यास संसार के शिखर पर खड़ा कर दिया है। इतना ही नहीं, उन्होंने श्री राम के नाम पर 'मर्यादा पुरुषोत्तमदास' बाल उपन्यास का भी सृजन किया था।

बाबा ने न केवल पाठकों को कविताओं और उपन्यासों की रचना से अपनेवश में ले लिया अपितु कहानी संग्रह, समीक्षा–संस्मरण, प्रबंध काव्य, बाल साहित्य और अनुवाद से भी पाठकों का दिल जीत लिया था। बाबा ने बड़ों का ही नहीं बच्चों के प्रति उनका अपार प्रेम बाल साहित्य रचनों से दिखाया था। बाबा के बाल साहित्य रचनाओं में 'प्रेमचंदः बाल जीवनी', 'अयोध्या का राजा', 'कथा मंजरी', 'तुकों का खेल', 'अद्‌भुत टापू', 'तीन अहदी', 'चार चोर', 'सयानी कोयल', 'मर्यादा पुरुषोत्तम राम', 'वीर विक्रम', 'होनहारों की दुनिया', 'सैनिक से भिड़ंत यमराज', 'दुख','नदी फिर जी उठी' और 'वानर कुमारी' आदि रचनाएँ अधिक लोकप्रिय हैं जिनसे बाबा को बाल जगत का अपार स्नेह प्राप्त हो रहा था।

बाबा उपन्यास और कविताओं से साहित्य जगत में जितना नाम कमाया था उतना कहानियों से काम नहीं पाया, क्योंकि जब उनकी कहानी लेखन कला की शुरुआत हुई तब प्रेमचंद कहानी का क्षेत्र अपनी मुट्ठी में ले चुके थे और कहानी को नयी दिशा भी दी थी। बाबा के द्वारा रचित कहानियों में 'असमर्थदता', 'मम्ता', 'आसमान में चंदा तैरे', 'तापहारिणी', 'जेठा', 'कायापटल', प्रमुख हैं।

'एक व्यक्ति–एक युग' उनके द्वारा रचित समीक्षा–संस्मरण है। उन्होंने अनुवाद के क्षेत्र में भी 'कालिदास का मेघदूत','विद्यापति के गीत(1972)', 'सौ गीत विद्यापति','जयदेव का गीत गोविंद' और 'विद्यापति की कहानियाँ' की मूल भाषाओं से हिंदी में अनुवाद करके अनुवाद की कुशलता दिखायी थी।

निष्कर्ष

श्रीलंका से प्रभावित श्रीलंका में अमिट छाप छोड़े बाबा नागार्जुन की साहित्यिक सेवा कई सम्मान–पुरस्कारों से सम्मानित किया गया था। सन् 1966 में बाबा को उनकी 'पत्रहीन नग्न गांछ' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाजा गया था इसके अतिरिक्त भारत भारती, मैथिली शारणगुप्त और राजेन्द्र शिखर सम्मान आदि से भी सम्मानित किया गया था। लंबी अवधि की बीमारी के कारण ही 5 नवंबर 1998 को दरबंगा में बाबा ने हमेशा के लिए अपनी आँखें मूँद ली।

संदर्भ सूची

1. भट्ट, प्रकशचन्द्र (1975) *नागार्जुनः जीवन और साहित्य,* सेवसादन प्रकाशन, रामपुरा, जिला–मंदसौर, म. प्र, पृ. 17।
2. यादव, सुरेन्द्र कुमार (2001) *नागार्जुन का उपन्यास साहित्य समसामयिक संदर्भ,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 13।
3. वही, पृ. 11।
4. जोशी, राजेश (2005) *नागार्जुन रचना संचयन,* रवींद्र भवन, 35 फिरोजशाह मार्ग, नई दिल्ली, पृ. 327।
5. बिष्ट, प्रताप सिंह (1999) *आजकल,* जून, नागार्जुन विशेष आयोजन, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली, पृ. 15।
6. जोशी, राजेश (2005) *नागार्जुन रचना संचयन,* रवींद्र भवन, 35 फिरोजशाह मार्ग, नई दिल्ली, पृ. 9।
7. https://en.wikipedia.org/wiki/Lanka_Sama_Samaja_Party, Assessed on 10/02/2025.
8. भट्ट, प्रकाशचन्द्र (1974) *नागार्जुनय जीवन और साहित्य,* सेवसादन प्रकाशन, रामपुरा, मंदसौर, म.प्र., पृ. 24।
9. यादव, सुरेन्द्र कुमार (2001) *नागार्जुन का उपन्यास साहित्य समसामयिक संदर्भ,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 13।
10. बिष्ट, प्रताप सिंह (जून 1996) *आजकल नागार्जुन विशेष आयोजन,* व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली, पृ. 16।
11. शैक्षिक विडिओ कार्यक्रम, केन्द्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी संस्थान,राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, (2010)।
12. वही।
13. शोभाकांत (2011) *नागार्जुनः मेरे बाबूजी,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
14. श्री धरम (2011) *स्त्री स्वाधीनता का प्रश्न और नागार्जुन के उपन्यास,* अंतिका प्रकाशन, सी–५६, यूजीएफ ४,शालीमार गार्डन, गाजियाबाद २०१००५।
15. सारस्वत, अपर्णा (2010) *स्वतंत्रयोत्तर हिंदी काव्यधारा की मूल चेतना,* सामयिक बुक्स , 3320–29, जटवाड़ा, दरियागंज, नई दिल्ली 110002।
16. ओझा, सीमा (जून 2011) *आजकल,* प्रकाशन विभाग, कमरा नं 120, सूचना भवन, सी. जी.ओ. कॉम्प्लेक्स,लोदी रोड नई दिल्ली– 110003।
17. सत्यवत (अप्रेल 2011), *समकालीन समाचार,* किताब घर प्रकाशन, पो. बॉ. 7240. नई दिल्ली–2।
18. मीणा, हेमराज; मीरा, सरीन (2000) *हिंदी काव्य संग्रह,* केंद्रीय हिंदी संस्थान, हिंदी संस्थान मार्ग, आगरा 282005।

****